# International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)

Volume 3 Issue 5, August 2019 Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 - 6470

# वैदिक शिक्षा व्यवस्था की वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता

#### Dr. Saroj Meena

Associate Professor, Sanskrit Department, B.S.R. Govt. Arts College, Alwar, Rajasthan, India

ISSN: 2456-6470

सार

शिक्षा मनुष्य को न केवल संस्कारवान बनाती है। बल्कि व्यक्ति में सामाजिक गुणों का विकास करती है।" यह विचारधारा पौराणिक काल (वैदिक काल) से चली आ रही है। हमारे विचारों में हम जो आज हमारे आस-पास के वातावरण को देखते है तथा प्रौद्योगिकी एवं नवीन आविष्कारों से स्वयं को प्रभावित मानते है वह आज के ज्ञान का नया स्वरूप है। लेकिन वास्तव में हमे इसके नियमानुसार उपयोग के लिए वैदिक जीवन शैली को अपनाना होगा। क्योंकि ज्योतिष विज्ञान, खगौल विज्ञान, भूगोल विज्ञान, में होने वाली घटनाओं का परम्परागत विधियों से निर्णय व निदान वैदिक शिक्षा में उपलब्ध है। अतः निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते है कि वर्तमान शिक्षा के स्वरूप को वैदिक शिक्षा के नियमों के अनुसार स्वीकार किया जाना चाहिए, क्यांेकि इसका स्वरूप हमारी शिक्षा पद्धति व इसके महत्व को बनाये रखने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा मानव का मानसिक एवं बौद्धिक विकास में सहायक होती है। इसलिए आवश्यक है की शिक्षा मानवीय तथा नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण हो।आज हम शिक्षा प्रणाली के आधार पर दो महत्वपूर्ण शिक्षा प्रणाली का अध्ययन करेंगे। वैदिक कालीन शिक्षा और आधुनिक शिक्षा शिक्षा के दो वृहद सोपान हैं, जिनमें समय और परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन देखने को मिलता रहा है।वैदिक कालीन शिक्षा और आधुनिक शिक्षा के अंतर्गत हम प्राचीन शिक्षा प्रणाली के महत्व व विशेषताओं के अध्ययन के साथ साथ आधुनिक शिक्षा प्रणाली की दिशा व दशा का ज्ञान प्राप्त करेंगें।तो आइए दो बेहतरीन शिक्षा प्रणालियों का विस्तार से अध्ययन करें प्राचीन भारतीय शिक्षा मनीषियों ने एक निश्चित शिक्षा पद्धति निर्मित की थी जो वैदिक शिक्षा प्रणाली के रूप में समाज में पल्लवित हुई।

How to cite this paper: Dr. Saroj Meena "Relevance of Vedic Education System in

the Present Context" Published International Journal of Trend in Scientific Research Development (ijtsrd), ISSN: 2456-6470, Volume-3 | Issue-5,



August 2019, pp.2702-2705, URL: www.ijtsrd.com/papers/ijtsrd27951.pdf

Copyright © 2019 by author(s) and International Journal of Trend in Scientific Research and Development

Journal. This is an Open Access article distributed under the



terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0)(http://creativecommons.org/licenses/by/4.0)

परिचय

यह प्रणाली अनेक वर्षों के उपरान्त आधुनिक काल में भी अपनी प्राचीन संस्कृति और शिक्षा को जीवन्त बनाये हुए है।भारत में प्राचीन वैदिक शिक्षा का प्रारम्भ ऋग्वेद के रचनाकाल से माना जाता है। बौद्ध काल के प्रारम्भ होने के पहले का सम्पूर्ण कालखण्ड वैदिक काल के नाम से जाना जाता है।कुछ विद्वानों ने इस काल को कई उपकालों में विभक्त किया है, जैसे-ऋग्वेद काल, ब्राह्मणकाल, उपनिषदकाल, सूत्रकाल और काल आदि। इन सभी उपकालों में वेदों की प्रधानता रही है, अतः इस काल को वैदिक काल कहना सर्वाधिक उचित प्रतीत होता है। आधुनिक शिक्षा कही न कही वैदिक शिक्षा से ही प्रेरित रही है। शिक्षा के क्षेत्र में भली प्रकार अध्ययन करने के लिए वैदिक कालीन शिक्षा के दर्शन के प्रमुख विन्दुओं पर विचार किया जाना आवश्यक है।जैसे कि वैदिक कालीन शिक्षा का अर्थ, महत्व एवं मूल्यांकन। इस युग में शिक्षा शब्द का प्रयोग व्यापक और संकुचित दोनों ही अर्थो में किया गया। मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन काल में प्रत्येक परिस्थितियों से शिक्षा प्राप्त करता है। संकृचित अर्थ में शिक्षा का अभिप्राय उस औपचारिक शिक्षा से लिया

जाता है,जिसे प्रत्येक बालक अपने प्रारम्भिक जीवन के कुछ वर्षो में गुरूकुल में रहकर ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करता हुआ अपने गुरू से प्राप्त करता है।[1]

अतः वैदिक शिक्षा का तात्पर्य उस मार्ग दर्शन से है जिससे व्यक्ति का सर्वागीण विकास हो सके और वह धर्म के मार्ग पर चलकर मानव जीवन के चरम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सके।वैदिक युग में शिक्षा को विशेष महत्व दिया जाता था। आर्यो का विश्वास था कि शिक्षा के ही व्यक्ति द्वारा शारीरिक, मनासिक, आध्यात्मिक और सामाजिक विकास हो सकता है।ज्ञान को मानव का तीसरा नेत्र माना गया है। शिक्षा के माध्यम से ही मनुष्य के ज्ञान रूपी तीसरा नेत्र अर्थात अंर्तचक्षु खुल जाते है- 'ज्ञानं मनुजस्य ततीयं नेत्रं': भतुहरि ने अपने नीतिशतक में लिखा है-

'विद्या विहीनः पशः'

अतः जिनके पास विद्या नहीं है वे मनुष्य नहीं अपितु पशु तुल्य है। वैदिक कालीन शिक्षा के उद्देश्य एवं आदर्शो के विषय में डॉ० अल्तेकर ने लिखा है

कि ''ईश्वर भक्ति तथा धार्मिकता की भावना चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व विकास. नागरिक का सामाजिक कर्तव्यो का पालन, सामाजिक कुशलता की उन्नति तथा राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण और प्रसार प्राचीन भारत में शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य तथा आदर्श थे। वैदिक कालीन शिक्षा में आत्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान को अधिक महत्व दिया जाता था। गुरूकुलों का सम्पूर्ण वातावरण आध्यात्मिकता और धार्मिकता से परिपूर्ण होता उद्देश्य चरित्र-निर्माण, व्यक्तित्व था।शिक्षा विकास, नागरिक एवं सामाजिक कर्तव्यो के पालन की प्रवृति का विकास एवं सामाजिक कौशल का विकास आदि तत्वों पर आधारित था।वैदिक शिक्षा पद्धति अपने आदर्शों और उद्देश्यों को पूर्ण करने में काफी हद तक सफल रही हैं। प्राचीन शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों में धार्मिक भावना का विकास होता था,चरित्र-निर्माण में भी वैदिक कालीन शिक्षा पद्धति सुलभ रही। यही नहीं विकास, सामाजिक व्यक्ति सुख-समृद्धि का वृद्धि, राष्ट्रीय संस्कृति की रक्षा तथा प्रसार आदि आदर्शो के माध्यम से विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास होता था।यदि विस्तार से दृष्टिपात किया जाये तो आधुनिक शिक्षा प्रणाली की अपेक्षा वैदिक कालीन शिक्षा प्रणाली में आदर्शो के विकास के साथ-साथ धार्मिकता पर अधिक जोर दिया गया. जिसके कारणवश लौकिक शिक्षा का अभाव पाया जाता है। साथ ही स्त्री शिक्षा की भी उपेक्षा देखने को मिलती है।शिक्षा एवं धार्मिक अनुष्ठानों का माध्यम संस्कृत भाषा होने के कारण प्राकृत आदि लोक भाषाओं के विकास में अवरोध हो गया।वैदिक कालीन शिक्षा में कुछ असफलताएं जो दृष्टिगोचर होती है वे उतर वैदिक काल की देन थी।किन्तू यथार्थता तो यह है कि वैदिक कालीन शिक्षा ने भारतीय संस्कृति के निर्माण और विकास में अपूर्ण योगदान प्रदान किया।श्रेष्ठ विशेषताओं के कारण वैदिक शिक्षा ऋग्वेद काल से लेकर अनेक परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए आज भी अक्षुण बनी हुई है।[2]

आधुनिक शिक्षा कही न कही वैदिककालीन शिक्षा से ही प्रेरित रही है। 15 अगस्त सन् 1947 को देश के स्वतंत्र होने के पश्चात् शिक्षा के इतिहास में एक नया युग प्रारम्भ हुआ।शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में विकास एवं विस्तार किये गये। प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और सार्वभौमिक, माध्यमिक शिक्षा को बहुउद्देशीय और उच्च शिक्षा के स्तर को उन्नत बनाने के प्रयास किय गये।आधुनिक शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य चरित्र निर्माण के साथ-साथ राष्ट्रीय निर्माण भी होना चाहिए। शिक्षा का समुचित विकास होने के बाद भी आधुनिक शिक्षा अपने मूल उद्देश्य से पथभ्रष्ट हो गई है।

शिक्षा संस्थान व्यापार एवं शिक्षा सामाजिक स्टेटस के पर्याय बनकर सीमित रह गयी हैं। यही कारण है कि आधुनिक शिक्षा वैदिक कालीन शिक्षा के विपरीत चली आ रही है।जिस चरित्र निर्माण, मानसिक विकास, सांस्कृतिक उन्नति एवं

आध्यात्मिक पवित्रता की धारा वैदिक कालीन शिक्षा में प्रवाहित हुई थी, वह आधुनिक शिक्षा में आते-आते कही लुप्त हो गई है,किन्तु यदि समाज को उन्नतशील बनाना है, देश को विकासशील बनाना है, मानवता को उच्चकोटि पर स्थापित करना है, तो आधुनिक शिक्षा के सामाजिक स्टेटस और व्यापार के पर्याय से ऊपर उठकर चरित्र निर्माण, राष्ट्रनिर्माण, व्यक्तित्व निर्माण, आध्यात्मिक पवित्रता एवं मानव के सर्वागीण विकास सम्बन्धी विस्तत धरातल पर स्थापित करना होगा।क्योंकि भारत एक आध्यात्मिक देश है, हमें अपनी धार्मिक चेतना को सदैव प्रवाहित करनी होगी। अनेकानेक संस्कृतियों और सभ्यताओं के प्रभाव ग्रहण कर हमारी चिन्तन परम्परा का प्रवाह प्रस्तर होता रहा है।हमारे चिन्तन एवं दर्शन की मूल विशेषता यह है कि हम अपने आध्यात्मिक चेतना से आज भी उसी तरह जुड़े हुए है, जैसा कि पहले हम जुडे हुए थे। और उसी परम्परा को भविष्य में ले जाने के लिए हम प्रतिबद्ध हैं।निसंदेह वैदिक शिक्षा और आधुनिक शिक्षा प्रणाली शिक्षा के दो महत्वपूर्ण सोपान है किन्तु आधुनिकता के साथ साथ हमे अपनी संस्कृति को भी विस्मृत नही करना चाहिए। वही हमारी जड है और आधार भी।अत: आधुनिक शिक्षा प्रणाली में वैदिक शिक्षा के संस्कारों का समावेश होना आवश्यक है।

## विचार-विमर्श

भारत आदिकाल से विश्व गुरु रहा है। यहां की शिक्षा का पूरे विश्व में कोई सानी नहीं था, जिसके कारण दूर से दूर देश से भारत में आकर विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण किया करते थे। वेदकालीन शिक्षा मौखिक पद्धति पर आधारित थी। उस समय मुद्रण कला का विकास नहीं हुआ था। मौखिक शिक्षा विधि से ही गुरु अपने शिष्य तक ज्ञान का हस्तांतरण किया करता था। मौखिक विधि दीर्घकालिक थी, जबिक ताल पत्र आदि पर तैयार की गई प्रतियां अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रह पाती थी। इस संग्रहित ज्ञान को वह अपने शिष्यों को निरंतर अभ्यास से कंठस्थ करवाते थे। इस विधि के माध्यम से शिक्षक अपनी बौद्धिक संपदा शिष्यों तक पहंचाया करते थे। वेद कालीन शिक्षा में उच्चारण और शुद्धता पर विशेष बल दिया जाता था। शिक्षक स्वयं शब्दों का शुद्ध उच्चारण किया करते थे और अपने शिष्यों को भी शुद्ध उच्चारण के लिए प्रेरित करते थे। इस शुद्धता के लिए उन्होंने मंत्रों की व्याख्या भी की थी. साथ ही मंत्रों को गायन के साथ भी जोड़ा था। इस विधि से विद्यार्थी सुविधाजनक रूप से मंत्रों को याद कर सके।प्रातः तथा सायं समय विद्यार्थियों से मंत्रोचार करवाया जाता था इस विधि से उनके उच्चारण में शुद्धता आती थी। मुद्रण कला का विकास ना होने के कारण वेद कालीन शिक्षा पद्धति मौखिक विधि पर ही आधारित थी। वेदकालीन शिक्षा की प्रमुख भाषा संस्कृत मानी गई है। संस्कृत के शब्द बेहद कठिन हुआ करते थे इसलिए उन्हें बारीकी से उच्चारण के साथ अभ्यास किया जाता था। बार-बार दोहराने अर्थात रटने पर बल दिया जाता था, जिससे निरंतर अभ्यास में रहते हुए विद्यार्थी मंत्रों की शुद्धता को जानते हुए आत्मसात कर पाते थे।[3]

वेदकालीन शिक्षा की एक प्रमुख विशेषता यह थी कि शिक्षक और शिष्य के बीच व्यक्तिगत रूप से शिक्षा के आदान-प्रदान का कार्यक्रम हुआ करता था। गुरु अपने शिष्य को व्यक्तिगत रूप से पढ़ाता था। उसके संपूर्ण जीवन सेवा भली भांति परिचित रहा करते थे। इस शिक्षा की प्रक्रिया में गुरु तथा शिष्य दोनों ही सक्रिय भूमिका में रहा करते थे। गुरु जहां अपने बौद्धिक संपदा का हस्तांतरण शिष्य तक किया करते थे। वही शिष्य अपनी समस्या तथा शंका आदि का समाधान गुरु के सानिध्य में किया करते थे। गुरु अपने शिष्यों की समस्याओं को समझ कर उनका भली-भांति निवारण किया करते थे। इससे वह विश्वस्त हुआ करते थे कि उन्होंने जो अपनी शिक्षा शिष्य तक पहुंचाई क्या वह पूर्ण रुप से शिष्य तक पहुंच रही है। कमियों को जांच कर उन्हें दूर किया जाता था और शिक्षा को शुद्ध रूप से अपने शिष्य तक पहुंचाया जाता था। वेद कालीन में शिक्षण की कुछ प्रचलित प्रणालियां थी – भाषण विधि, व्याख्यान विधि, प्रश्नोत्तर विधि, सूक्ति विधि, अन्योक्ति विधि, कथा विधि तथा कण्ठस्तीकरण की विधि।[5]

इसके माध्यम से गुरु अपने शिष्य की परीक्षा लिया करते थे।

गुरु अपने शिष्य को दिशा दिखाया करते थे, उसके शंका का समाधान किया करते थे और विशेष रूप से शिष्य के भीतर की उत्सुकता, जानने की इच्छा को जागृत किया करते थे। प्रेरित होकर शिष्य अपना ज्ञान अर्जन किया करते थे। इसके माध्यम से गुरु अपने शिष्य के भीतर की अन्वेषण प्रवृत्ति को जागृत किया करते थे। उनके रुचि के विषय में गहन अध्ययन के लिए प्रेरित किया करते थे। गुरु अपने शिष्य को सामान्य ज्ञान देकर विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने के लिए भी प्रेरित करते थे। तत्कालीन शिक्षा का आरंभ विद्यार्थी के उपनयन संस्कार के पश्चात हुआ करता था।

तदोपरांत एक दूसरा संस्कार **मेधाजनन** नाम से हुआ करता 🔝 था।

इस संस्कार के माध्यम से ऐसी प्रार्थना की जाती थी कि छात्र ऐसी बुद्धि प्राप्त करें जो गायों की भांति आकर्षक और सूर्य की भांति प्रखर हो और उसकी सृजनात्मक बुद्धि जागृत हो। इसके बाद विद्यार्थी का गुरुकुल में शिक्षा प्रारंभ हुआ करता था, जहां रहकर वह वाद-विवाद की शक्ति को विकसित करता था। शास्त्रार्थ करने में निपुण हुआ करता था तथा किसी भी समस्या का समाधान करने के लिए वह स्वयं तत्पर हो सके ऐसा ऐसा अभ्यास करता था।[4]

### परिणाम

वेदकालीन शिक्षा पद्धति में आज की भांति अर्धवार्षिक तथा वार्षिक परीक्षा का आयोजन नहीं किया जाता था। गुरु अपने शिष्यों की परीक्षा प्रतिदिन लिया करते थे। जो पाठ अपने विद्यार्थियों को पढ़ाते अगले दिन पूर्ण संतुष्टि होने पर ही दूसरे पाठ का आरंभ करते थे। इस कारण गुरु अपने शिष्य का मुल्यांकन नियमित प्रतिदिन के आधार पर किया करते थे। कभी-कभी वह पूर्व में दिए हुए शिक्षा का मूल्यांकन करने के लिए विद्वानों तथा शिष्यों के बीच वाद-विवाद तथा शास्त्रार्थ करवाया करते थे। इस वाद- विवाद तथा शास्त्रार्थ से शिष्य की योग्यता का पूर्ण ज्ञान हो जाया करता था। अध्ययन समाप्ति के उपरांत परीक्षा का कोई विधान नहीं था।

मुख्य रूप से देखें तो वेद काल में किसी प्रकार की परीक्षा तथा उपाधियां या परिपत्र आदि नहीं दिए जाते थे। आधुनिक

काल में जैसी व्यवस्था है वैसी व्यवस्था वेद काल में नहीं थी। वेद काल की शिक्षा व्यक्ति के जीवन पर आधारित थी। उसके आदर्श का विकास करना. चरित्र निर्माण करना तथा समाज के लिए विद्यार्थियों को तैयार करना था। आधुनिक शिक्षा का उद्देश्य केवल आर्थिक रूप से मजबूत होना है। आज की शिक्षा में परीक्षा, उपाधियां तथा डिग्री दी जाती है जो उसके व्यवसाय तथा नौकरी के लिए आवश्यक होती है। दोनों शिक्षा के बीच मुख्य अंतर यह था कि पूर्व समय में ज्ञानार्जन और बौद्धिक विरासत को सुरक्षित रखने के लिए शिक्षा की पूरी व्यवस्था थी।[6]

जबिक आधुनिक समय में शिक्षा की व्यवस्था का उद्देश्य आर्थिक उन्नति से जुड़ गया है।

जैसा कि हम जानते हैं वेदकालीन शिक्षा प्रक्रिया में गुरु शिष्य का परस्पर सहयोग होता था। शिक्षा की प्रक्रिया में दोनों सक्रिय भूमिका में रहते थे। शिष्य अपने गुरु को सब कुछ मानता था। गुरु उनके लिए माता-पिता, ईश्वर हुआ करते थे। वहीं गुरु अपने शिष्य का अभिभावक तथा शिक्षक होने के नाते उसे भावी जीवन की शिक्षा दिया करते थे। जीवन में सभी प्रकार की परिस्थितियों के लिए तैयार करना शिक्षक का मुख्य उद्देश्य हुआ करता था। विद्यार्थी किस प्रकार शिक्षा का सदुपयोग परिवार, समाज तथा राष्ट्र के लिए करे, अपने समस्त कर्तव्यों का उचित पालन करे, गुरु योजनाबद्ध रूप से शिक्षा विद्यार्थी को दिया करते थे।

शिक्षा समाप्ति के उपरांत विशेषकर गुरु अपने शिष्य को उपदेश दिया करते थे। यह उपदेश विद्यार्थी के लिए दीक्षांत के रूप में हुआ करता था। इस दीक्षांत उपदेश का सम्बन्ध 🗕 सत्य, धर्म, स्वाध्याय, गुरु, माता, पिता, अतिथि देवो भव, राष्ट्र, सेवा कार्य, चरित्र आदि से संबंधित हुआ करते थे। जब विद्यार्थी गुरुकुल से अपने घर लौट आते तब भी वह अपने गुरु से जुड़े रहते थे। किसी भी समस्या का समाधान या परामर्श के लिए वह गुरुकुल जाते। शिक्षक भी अपने शिष्य के निवास स्थान जाकर अपने शिक्षा के धरातल पर प्रयोग को जांचा करते

वह सुनिश्चित किया करते थे कि गुरुकुल में जो विद्यार्थी को शिक्षा दी गई उसका प्रयोग वह किस प्रकार कर रहा है। इस प्रकार गुरु तथा शिष्य सदैव के लिए एक-दूसरे से जुड़ जाया करते थे। समावर्तन संस्कार को साधारण शब्दों में समझें तो ब्रह्मचर्य जीवन का अंत तथा गृहस्थ जीवन का आरंभ बिंदु होता है।

यहां से शिष्य अपने गृहस्थ जीवन में शामिल हो जाता है।[5]

वेदकालीन शिक्षा में अनुशासन का बेहद महत्व था। गुरु उन शिष्यों का चयन किया करते थे जो अनुशासन प्रिय हो, सत्यवादी हो, ज्ञान ग्रहण की क्षमता रखते हो। गुरुकुल में प्रत्येक दिन को व्यतीत करने का एक अनुशासन बनाया गया था। प्रत्येक शिष्य नियमित दिनचर्या के अनुसार तय समय पर अपने सभी कार्यों को संपन्न करते थे।

प्रातः उठने के उपरांत तथा रात्रि विश्राम से पूर्व की दिनचर्या का पालन प्रत्येक शिष्य को करना पड़ता था। जिसमें शरीर को स्वच्छ रखना, सादा रहन-सहन, भोजन की व्यवस्था, गुरुकुल

की साफ-सफाई, पशुओं की सेवा आदि प्रमुख थी। इस दिनचर्या में बंधकर शिष्य अपना सर्वांगीण विकास किया करते थे। शारीरिक तथा आध्यात्मिक रूप से स्वयं को संपन्न किया करते थे। गुरुकुल की अनुशासन व्यवस्था में रहकर वह कम समय में त्याग, तपस्या, विनय, सात्विक आदि गुणों को ग्रहण कर लेते थे॥८१

# निष्कर्ष

तत्कालीन शिक्षा में शारीरिक अनुशासन के समान आध्यात्मिक अनुशासन का भी महत्व था। शरीर को जिस प्रकार अनुशासन में बांधा गया था उसी प्रकार विद्यार्थी को आध्यात्मिक अनुशासन में भी बांधा गया। वेदकालीन शिक्षा मुख्य रूप से आध्यात्मिकता पर आधारित थी। शिक्षा आरंभ करने से पूर्व व्यक्ति को अध्यात्म में रुचि होना आवश्यक था।

शिष्य की चयन प्रक्रिया में इसका विशेष ध्यान दिया जाता था। अध्यात्म का संबंध – स्वयं को जानना, गुरु की सेवा, अपने इंद्रियों को वशीभूत करना, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मान आदि से दूर रहना प्रमुख था। विद्यार्थी इस अनुशासन में रहते हुए स्वयं सत्य का साथ देते हुए सदाचार के मार्ग पर चलता था। मान, अपमान आदि का मोह त्यागकर वह मन, वचन, और कर्म से स्वयं को ईश्वर के साथ जोड़ने का प्रयत्न करता था।[9]

# संदर्भ

- [1] एजुकेशन इन ऐसेण्ट इण्डिया, वाराणसीः नन्द किशोर एण्ड ब्रदर्श, अल्तेकर एस०एस०
- [2] स्वतंत्र भारत में शिक्षा, दिल्लीः राजपाल एण्ड संस। कबीर, हुमायूँ
- [3] एजुकेशन इन इण्डियाः टुडे एण्ड टुमारो, बड़ौदाः आचार्य बुक डिपो मुखर्जी, एस०एम०
- [4] लैण्ड मार्क्स इन द हिस्टी ऑफ मॉडर्न इण्डियन एजुकेशन नई दिल्ली, वाणी बुक्स
- [5] भारतीय शिक्षा का इतिहास, आगराः रामप्रसाद एण्ड संस। रावत प्यारे लाल
- [6] शिक्षा की चुनौतीः नीति सम्बन्धी परिपेक्ष्य 1985
- [7] राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986.
- [8] भारतीय शिक्षा विकास एवं सामाजिक का डॉ० माल्ती समस्यायेंः सारस्वत, डॉ० एल०बी० बाजपेयी, आलोक प्रकाशन 165/64 कच्चा हाता, अमीना बाद, लखनऊ
- [9] शिक्षा-दर्शनः । पं0 सीताराम चतुर्वेदी, वीरेन्द्र नाथ घोषा, माया प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद